[2008] 3 एस.सी.आर. 97

निदेशकों का बोर्ड, एच.पी.टी.सी. एवं अन्य

बनाम

के.सी. राही

(दीवानी अपील संख्या 4524/2006)

20 फरवरी, 2008

(एच.के. सेमा एवं मार्कण्डेय काटजू, न्यायाधिपतिगण)

भारत का संविधान, 1950 अनुच्छेद, 226-न्यायाधिकरण द्वारा अभिलिखित तथ्यों के निष्कर्षों मेंहस्तक्षेप-विभागीय जांच-अपचारी को समाचार पत्र के प्रकाशन के माध्यम से नोटिस प्रेषित किया गया- अपचारी पूर्व में जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ-एकपक्षीय कार्यवाहियां-आरोप सिद्ध पाये गये-न्यायाधिकरण द्वारा सेवा से बर्खास्तगी की पुष्टि की गई- उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई-उच्च न्यायालय द्वारा अपचारी पर समग्र रूप से तामील नहीं होने के आधार पर न्यायाधिकरण का आदेश अपास्त किया गया और यह निर्धारित किया गया कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अतिलंघन हुआ-निर्धारित-न्यायाधिकरण द्वारा अभिलिखित तथ्यों के साथ अपचारी को तामील हो गई थी-इसलिए उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 226 में दिये गये क्षेत्राधिकार का अतिलंघन किया

गया-अनुच्छेद 226 की शक्तियों के तहत तभी हस्तक्षेप किया जा सकता है, जब न्याय की विफलता हुई हो और अभिलेख पर विधि की त्रुटि हो, न कि प्रथम तरह के न्यायालय द्वारा अभिलिखित साक्ष्य के पुनर्विवेचन में-अभिलेख से साफ दर्शित होता है कि अपचारी जानता था कि उसके विरूद्ध विभागीय जांच प्रारंभ हो गई थी, तो भी उसने स्वयं के जोखिम पर जांच की कार्यवाही में भाग नहीं लेना चुना-ऐसी स्थिति में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का तर्क परित्यक्त किया होना प्रकट होता है और वह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की पालना पर उठाये गये प्रश्नों से विवर्जित होगा-उच्च न्यायालय द्वारा न्यायाधिकरण द्वारा अभिलिखित तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप किये जाने में त्रुटि की है-नोटिस -तामील-समाचार पत्र में प्रकाशन द्वारा तामील-नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत-नोटिस की उचित तामील।

तर्क-विधि की भूल का तर्क-निर्धारित विधि की भूल क्षम्य नहीं है, जबकि ऐसे व्यक्ति द्वारा की गयी जो स्वयं विधि स्नातक हो।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकारिता, दीवानी अपील संख्या 4524/2006

हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय, शिमला के सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 460/1999 के अंतिम आदेश व निर्णय दिनांक 23.12.2004 के विरुद्ध अपील

अपीलार्थी की ओर से जे.एस. अत्री

प्रत्यर्थी की ओर से सुधा गुप्ता

न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश पारित कियाः-

न्यायाधिकरण के आदेश दिनांक-28.06.1999 को उच्च न्यायालय द्वारा आदेश दिनांक-23.12.2004 द्वारा अपास्त करने से व्यथित होकर हिमाचल प्रदेश परिवहन निगम द्वारा यह अपील प्रस्तुत की गई है।

हमने पक्षकारों को सुना।

संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैंः-

प्रासंगिक समय पर प्रत्यर्थी हिमाचल प्रदेश परिवहन निगम में निरीक्षक के पद पर कार्यरत था। उसके विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल था। उसे ट्रिब्यून द्वारा प्रकाशन के माध्यम से नोटिस प्रेषित किया गया, फिर भी प्रत्यर्थी के द्वारा जांच कार्यवाही में भाग नहीं लिया गया। जांच में एकतरफा कार्यवाही अमल में लायी गयी। जांच अधिकारी ने उसके विरुद्ध सभी आरोपों में दोषसिद्ध पाये जाने की रिपोर्ट दिनांक 22.05.1990 को दाखिल की। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जांच रिपोर्ट के अवलोकन के बाद व न्यायिक विवेक का प्रयोग करने के बाद प्रत्यर्थी को दिनांक 16.06.1994 के आदेश से सेवा समाप्त कर दी।

इससे व्यथित होकर प्रत्यर्थी ने राज्य प्रशासन न्यायाधिकरण के समक्ष मूल आवेदन प्रस्तुत किया। उसने अपने तर्कों में एक तर्क

न्यायाधिकरण के समक्ष उठाया कि प्रत्यर्थी को बिना सुने जांच कार्यवाही एकतरफा की गयी, इसलिये सेवा समाप्ति का आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अननुपालन से ग्रसित है। न्यायाधिकरण द्वारा जांच रिपोर्ट व दस्तावेजों के अवलोकन के बाद पाया कि प्रत्यर्थी को ट्रिब्यून द्वारा नोटिस की तामील हो गयी थी। इस कारण से न्यायाधिकरण का उक्त तर्क खारिज कर दिया। न्यायाधिकरण ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी द्वारा पेश अभ्यावेदन दिनांक 09.08.1993 व 19.10.1993 में दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी ने उसके विरुद्ध शुरू की गयी विभागीय जांच की अच्छी तरह से जानकारी थी फिर भी वह जान-बूझकर नोटिस की तामील से बचता रहा और उसने जांच कार्यवाही में भाग नहीं लिया, इसलिये वह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की पालना के बचाव का प्रश्न नहीं उठा सकता। उक्त आधार पर न्यायाधिकरण ने उसका मूल आवेदन खारिज कर दिया।

इससे व्यथित होकर प्रत्यर्थी ने उक्त आदेश के विरूद्ध उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ में रिट याचिका पेश की और उसकी रिट याचिका एक मात्र इस आधार पर स्वीकार की गयी कि प्रत्यर्थी पर नोटिस की तामील नहीं हुई है और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है।

न्यायाधिकरण द्वारा निष्कर्ष रूप में यह तथ्य अभिलिखित किया कि प्रत्यर्थी पर नोटिस की तामील हो गयी थी, इसलिये हमारे मत में उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 में दी गयी शक्तियों के प्रयोग में संबंधित

क्षेत्राधिकारिता से परे जाकर न्यायाधिकरण द्वारा दिये गये निष्कर्ष को पलटने का आदेश दिया है। अनुच्छेद 226 में प्रदत्त शक्तियाेंं के तहत तभी हस्तक्षेप किया जा सकता है, जब न्याय की विफलता हुई हो और अभिलेख पर विधि की त्रुटि हो, न कि प्रथम बार के न्यायालय द्वारा अभिलिखित साक्ष्य की पुनर्विवेचना में।

नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को कोई एक सूत्र में नहीं रखा जा सकता। इसका प्रयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों-परिस्थितियों पर निर्भर करता है। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की अननुपालना को स्थापित करने के लिए किसी को यह स्थापित करना पड़ेगा कि उससे प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

वर्तमान मामले में विभिन्न दस्तावेजों व प्रत्यर्थी स्वयं द्वारा दिये गये दिनांक-19.10.1993 के अभ्यावेदन के आधार पर हमें यह स्पष्ट रूप से दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी के विरूद्ध विभागीय जांच शुरू की गई थी, फिर भी स्वयं ने अपने जोखिम पर जांच कार्यवाही में भाग नहीं लेना चुना था। ऐसे में नैसर्गिक न्याय के बिंदु का तर्क अभित्याजित प्रतीत होता है और उसे नैसर्गिक न्याय की अननुपालना के बिंदु को उठाये जाने से विवंधित माना जावेगा। उसके द्वारा दिनांक-19.10.1993 को पेश किये गये अभ्यावेदन से अपने आप "विभागीय जांच" विषयवस्तु दर्शित होती है। स्पष्ट रूप से प्रत्यर्थी द्वारा विधि स्नातक बताया गया है, इसलिए वह विधि

की भूल की बिंदु का तर्क नहीं ले सकता। स्वयं ऐसे व्यक्ति द्वारा जो कि स्वयं विधि स्नातक है, उसके लिए विधि की भूल क्षम्य नहीं है।

उपर्युक्त समस्त कारणों से उच्च न्यायालय ने न्यायाधिकरण द्वारा जो तथ्य अभिलिखित किये, उन्हें पुनः विवेचना करने में त्रुटि कारित की है। उक्तानुसार उच्च न्यायालय का आदेश अपास्त किया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है। न्यायाधिकरण का आदेश बहाल किया जाता है। प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय में पेश रिट याचिका बिना व्यय खारिज की जाती है।

अपील स्वीकार

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मुकेश आर्य (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।